E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

षोढा (षड्विध) सन्निकर्ष

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

प्रत्यक्ष ज्ञान के लिए 'इन्द्रिय' और 'अर्थ' का 'सन्निकर्ष' आवश्यक है। प्रत्यक्ष कराने वाले सम्बन्धविशेष को 'सन्निकर्ष' कहते हैं। प्रत्यक्ष का करणभूत इन्द्रिय और अर्थ का सन्निकर्ष, जो साक्षात्कारि प्रमा का का हेतु है, वह षड्विध (छः प्रकार के) हैं-'संयोग', 'संयुक्त-समवाय', 'संयुक्त समवेत समवाय', 'समवाय', 'समवेत-समवाय' तथा 'विशेषण-विशेष्य भाव'।

यहाँ ध्यातव्य है कि न्याय-वैशेषिक दर्शन में 'इन्द्रिय' को द्रव्य ही माना है। इस दर्शन के अनुसार बाह्येन्द्रियों में केवल 'चक्षु तथा त्वक्' इन्द्रियों से ही घट-पटादि द्रव्यों का प्रत्यक्ष होता है। एवं अन्तरिन्द्रिय 'मन' के द्वारा 'आत्मा' का प्रत्यक्ष होता है। अतः ये तीन इन्द्रियाँ ही संयोग सन्निकर्ष द्वारा 'अर्थ' (वस्तु) का प्रत्यक्ष कराती हैं।

'द्रव्य' के साथ इन्द्रिय का संयोगसन्निकर्ष होता है, और 'द्रव्य' ही सर्वाश्रय (समस्त पदार्थों का आश्रय) होने से प्रधान भी है, अतः छः प्रकार के सन्निकर्षों में तत्सम्बन्धरूप संयोग को सर्वप्रथम बताया गया है। तदनन्तर 'द्रव्य' में आश्रित 'गुणों' का सन्निकर्ष 'संयुक्तसमवाय' को बताया गया है। तदनन्तर 'गुणादि' में रहने वाले 'सामान्य' के सन्निकर्ष 'संयुक्तसमवेतसमवाय' को बताया गया है। तदनन्तर 'समवाय' सन्निकर्ष को बताया है, क्योंकि वह 'भावपदार्थों' का धर्म है। तदनन्तर 'समवेतसमवाय' सन्निकर्ष बताया गया है क्योंकि वह समवेत (समवाय सम्बन्ध से रहने वाले) पदार्थ में 'समवाय' से स्थित 'सामान्य' का ग्रहण कराता है। तदनन्तर 'विशेष्य-विशेषणभाव सन्निकर्ष को बताया गया है क्योंकि वह 'अभाव आदि' का ग्राहक है।

सम्बन्ध तो मुख्यतया 'संयोग' तथा 'समवाय' दो ही हैं क्योंकि इन दोनों में ही सम्बन्ध का लक्षण घटित होता है। अन्य सन्निकर्षों को तो गौणरूप से सम्बन्ध कहा जाता है क्योंकि इनका सम्बन्ध किसी-न-किसी रूप में दोनों सम्बन्धियों से रहता है।

1. संयोगसन्निकर्ष- इन्द्रिय का वस्तु से सम्बन्ध या सम्पर्क 'संयोग' सन्निकर्ष कहलाता है, यथा चक्षु का घट से सम्बन्ध या सम्पर्क 'संयोग' सन्निकर्ष होता है। जब चक्षुरिन्द्रिय से घटविषयक (घट का) ज्ञान उत्पन्न होता है, तब 'चक्षु' इन्द्रिय है और 'घट' अर्थ है। उन दोनों का सन्निकर्ष 'संयोग' ही कहा जाता है क्योंकि ये दोनों 'अयुतसिद्ध' नहीं हैं। अभिप्राय यह है कि 'चक्षु' और 'घट' ये दोनों पदार्थ यदि 'अयुतसिद्ध' होते तो उनका परस्पर 'समवाय सम्बन्ध होता। किन्तु इनके 'अयुतसिद्ध' न होने से इनका सम्बन्ध (सन्निकर्ष) 'संयोग' ही है। इसी प्रकार अन्तरिन्द्रिय 'मन' से जब आत्मविषयक (आत्मा का) ज्ञान होता है, तब 'मन' इन्द्रिय और 'आत्मा' अर्थ है। इन दोनों का सम्बन्ध (सन्निकर्ष) 'संयोग' ही कहा जाता है।
2. संयुक्तसमवाय- 'संयुक्तसमवाय' शब्द का अर्थ है-'संयुक्त में समवाय'। इस सन्निकर्ष से इन्द्रियसंयुक्त हुए द्रव्यों में गुण, कर्म तथा जाति का ग्रहण होता है, क्योंकि द्रव्य में गुण, कर्म तथा जाति समवायसम्बन्ध से रहते हैं। जहाँ चक्षु से घट के रूप का ज्ञान होता है, वहाँ चक्षु से संयुक्त 'घट' है क्योंकि चक्षु और घट दोनों में परस्पर संयोगसम्बन्ध है। उस चक्षुःसंयुक्तघट में 'रूप' गुण समवाय सम्बन्ध से रहता है।इसीलिए घट-रूप का ज्ञान संयुक्तसमवायसन्निकर्ष से माना जाता है। इसी प्रकार त्वगिन्द्रिय से घट के स्पर्श का ज्ञान, रसनेन्द्रिय से जलादि के रस का ज्ञान, तथा घ्राणेन्द्रिय से पुष्पादि के गन्ध का ज्ञान, इसी संयुक्तसमवायसन्निकर्ष से होता है। पञ्चज्ञानेन्द्रियों में से श्रोत्रेन्द्रिय को छोड़कर शेष चारों से संयुक्तसमवायसन्निकर्ष द्वारा पदार्थ (गुण, कर्म, जाति) का प्रत्यक्ष हुआ करता है। जैसे 'घटे रूपम्' में 'गुण' का प्रत्यक्ष, 'घटः कम्पते' में कर्म (क्रिया का प्रत्यक्ष), 'घटो द्रव्यम्' अर्थात् 'द्रव्यत्वजात्याश्रयो घटः' द्रव्यजाति का प्रत्यक्ष संयुक्तसमवाय सन्निकर्ष होता है। वस्तुतः जब चक्षुरादि इन्द्रिय से 'घट के रूपादि' का ग्रहण होता है अर्थात् घट में श्यामरूप है, ऐसा ज्ञान होता है, तब 'चक्षु' इन्द्रिय है और 'घट का रूप' अर्थ (विषय) होता है। और इन दोनों का सन्निकर्ष संयुक्तसमवाय ही होता है क्योंकि चक्षु से संयुक्त हुए 'घट' में रूप का समवाय है। इसीलिए चक्षुरिन्द्रिय और 'घटरूप' अर्थ का 'संयुक्तसमवाय' सन्निकर्ष ही माना जायेगा-"यदा चक्षुरादिना घटरूपादिकं गृह्यते घटे श्यामं

रूपमस्तीति, तदा चक्षुरिन्द्रियं, घटरूपमर्थः, अनयोः सन्निकर्षः संयुक्तसमवाय एव। चक्षुःसंयुक्ते घटे रूपस्य समवायात्"।

3. संयुक्तसमवेतसमवाय-जब प्रत्यक्षीकृत द्रव्य एवं गुण आदि में समवाय सम्बन्ध से रहने वाली जाति आदि का ज्ञान प्राप्त किया जाता है, तब 'संयुक्तसमवेतसमवाय' सन्निकर्ष होता है। जब चक्षुरिन्द्रिय से घट के रूप में समवेत (समवाय सम्बन्ध से रहने वाला) रूपत्व आदि सामान्य (जाति) अर्थ है, और उन दोनों का सन्निकर्ष 'संयुक्तसमवेतसमवाय ही रहता है। क्योंकि चक्षु से संयुक्त हुए 'घट' में 'रूप' समवायसम्बन्ध से रहता है, इसीलिए 'घट' में रूप समवेत कहलता है और उस 'रूप' में 'रूपत्व' का समवाय सम्बन्ध है।इसीलिए रूपत्वजाति के साथ चक्षु का परम्परया 'संयुक्तसमवेतसमवाय सन्निकर्ष हुआ। रूपत्व के समान ही 'संयुक्तसमवेतसमवायसन्निकर्ष' से शब्द के अतिरिक्त सभी 'गुणों तथा कर्म' में स्थित जाति का ग्रहण किया जाता है। इसी प्रकार प्रत्यक्षीकृत घट में रहने वाले नील गुण में समवाय सम्बन्ध से रहने वाली नीलत्व जाति का ज्ञान उक्त सन्निकर्ष से होता है, क्योंकि चक्षुःसंयुक्त घट में समवाय सम्बन्ध से रहने वाले नील गुण में नीलत्वरूप जाति समवाय सम्बन्ध से रहता है।
4. समवाय-श्रोत्रेन्द्रिय के द्वारा जो 'शब्द' का ज्ञान होता है, वह 'समवाय' सन्निकर्ष से होता है, 'श्रोत्र' आकाश ही है, उससे भिन्न नहीं है। 'श्रोत्र' और 'आकाश' यह भेदव्यवहार केवल औपाधिक ही है। कर्णविवर (छिद्र) के भीतर जो आकाश है, उसे श्रोत्र कहते हैं। 'शब्द' एक गुण है, वह 'आकाश' में रहता है। एवं च श्रोत्ररूप जो आकाश है, वह 'गुणी' है और उसका गुण शब्द है। तब गुण और गुणी का सम्बन्ध हमेशा 'समवाय' ही हुआ करता है।
5. समवेतसमवाय-जब शब्द में समवेत (समवाय सम्बन्ध से रहने वाली) 'शब्दत्व' आदि जाति का श्रोत्रेन्द्रिय से प्रत्यक्ष किया जाता है, तब 'समवेतसमवाय सन्निकर्ष' से ही वह हो पाता है। उस समय 'श्रोत्र' इन्द्रिय और 'शब्दत्व' आदि सामान्य अर्थ है। इन दोनों का सन्निकर्ष 'समवेतसमवाय' ही होता है क्योंकि श्रोत्रेन्द्रिय में समवाय सम्बन्ध से रहने वाले 'शब्द' में 'शब्दत्व जाति' का 'समवाय सम्बन्ध' होता है। एवं च श्रोत्र में समवेत होता है शब्द और उसमें

समवेत होता है 'शब्दत्व'। इसीलिए 'शब्दत्व' का श्रोत्र के साथ समवेत-समवाय सम्बन्ध होता है।

6. विशेषणविशेष्यभाव-जब किसी पदार्थ के अभाव का ग्रहण किया जाता है, तव विशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष होता है। न्याय-वैशेषिक मत में अभाव का ग्रहण भी प्रत्यक्ष से ही होता है, जैसे जब हम भूतल पर घट के अभाव को देखते हैं, तब कहते हैं कि 'घटाभाववद् भूतलम्', इस प्रकार के ज्ञान में भूतल रूप विशेष्य के साथ 'घटाभावरूप' विशेषण का भी प्रत्यक्ष होता है। इस प्रकार अभावज्ञान में 'विशेषणविशेष्यभाव' सन्निकर्ष होता है।